International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
Volume-1, Issue-1 February- 2014 P-ISSN 2348-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

जयशंकर प्रसाद के काव्य तथा उपन्यासों में समग्र साहित्य का मूल्यांकन

श्रीमती मधुबाला शर्मा
शोधार्थी
Sunrise University
Alwar, Rajasthan

सार

जयशंकर प्रसाद एक युगप्रवर्तक लेखक थे जिन्होंने एक ही साथ कविता, नाटक, कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में हिंदी को गौरव करने लायक कृतियाँ दीं। कवि के रूप में वे निराला, पन्त, महादेवी के साथ छायावाद के चौथे स्तंभ के रूप में प्रतिष्ठित हुए; नाटक लेखन में भारतेंदु के बाद वे एक अलग धारा बहाने वाले युगप्रवर्तक नाटककार रहे जिनके नाटक आज भी पाठक चाव से पढते हैं। इसके अलावा कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में भी उन्होंने कई यादगार कृतियाँ दीं। 48 वर्षो के छोटे से जीवन में कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास और आलोचनात्मक निबंध आदि विभिन्न विधाओं में रचनाएं की।

जीवन परिचय

प्रसाद जी का जन्म 30 जनवरी 1889 को काशी के सरायगोवर्धन में हुआ। इनके पितामह बाबू शिवरतन साहू दान देने में प्रसिद्ध थे और इनके पिता बाबू देवीप्रसाद जी कलाकारों का आदर करने के लिये विख्यात थे। इनका काशी में बड़ा सम्मान था और काशी की जनता काशीनरेश के बाद "हर हर महादेव" से बाबू देवीप्रसाद का ही स्वागत करती थी। किशोरावस्था के पूर्व ही माता और बड़े भाई का देहावसान हो जाने के कारण 17 वर्ष की उम्र में ही प्रसाद जी पर आपदाओं का पहाड़ टूट पड़ा। कच्ची गृहस्थी, घर में सहारे के रूप में केवल विधवा भाभी, कुटुबिंयों, परिवार से संबद्ध अन्य लोगों का संपत्ति हड़पने का षड्यंत्र, इन सबका सामना उन्होंने धीरता और गंभीरता के साथ किया। प्रसाद जी की प्रारंभिक शिक्षा काशी मे में हुई, किंतु बाद में घर पर इनकी शिक्षा का व्यापक प्रबंध किया गया, जहाँ संस्कृत, हिंदी, उर्दू, तथा फारसी का अध्ययन इन्होंने किया। घर के वातावरण के कारण साहित्य और कला के प्रति उनमें प्रारंभ से ही रूचि थी और कहा जाता है कि नौ वर्ष की उम्र में ही उन्होंने कलाधर के नाम से व्रजभाषा में एक सवैया लिखकर अपने गुरू रसमय सिद्ध को दिखाया था। उन्होंने वेद, इतिहास, पुराण तथा साहित्य शास्त्र का अत्यंत गंभीर अध्ययन किया था। वे बाग-बगीचे तथा भोजन बनाने के शौकीन थे और शतरंज के खिलाड़ी भी थे। वे नियमित व्यायाम करनेवाले, सात्विक खान पान एवं गंभीर प्रकृति के व्यक्ति थे। वे नागरीप्रचारिणी सभा के उपाध्यक्ष भी थे। क्षय रोग से जनवरी 14, 1937 को उनका देहांत काशी में हुआ।

कृतियाँ

प्रसाद जी के जीवनकाल में ऐसे साहित्यकार काशी में वर्तमान थे जिन्होंने अपनी कृतियों द्वारा हिंदी साहित्य की श्रीवृद्धि की। कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक और निबंध साहित्य की प्राय सभी विधाओं में उन्होंने ऐतिहासिक महत्व की रचनाएँ कीं तथा

खड़ी बोली की श्रीसंपदा को महान और मौलिक दान से समृद्ध किया। उर्वशी (चंपू) ; सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य (निबंध); शोकोच्छवास (कविता); प्रेमराज्य (क) ; सज्जन (एकांक), कल्याणी परिणय (एकाकीं); छाया (कहानीसंग्रह); कानन कुसुम (काव्य); करूणालय (गीतिकाव्य); प्रेमपथिक (काव्य); प्रायश्चित (एकांकी); महाराणा का महत्व (काव्य); राजश्री (नाटक) चित्राधार, झरना (काव्य); विशाख (नाटक); अजातशत्रु (नाटक); कामना (नाटक) और आँसू (काव्य) इनकी प्रमुख रचनाओं में शामिल हैं।

समग्र साहित्य में काव्य तथा उपन्यासों का विवरण

भारतेन्दु के उपरांत जयशंकर प्रसाद की प्रतिभा ने साहित्य के अनेक क्षेत्रों को एक साथ स्पर्श किया है। करूण मधुर गीत, अतुकान्त रचनाएं, मुक्त छंद, खंडकाव्य सभी उनके काव्य के बहुमुखी प्रसाद के अंतगर्त्त है। लघुकथा के वैचित्रय से लंबी कहानियों की विविधता तक उनका कथा साहित्य फैला है। नागरिक यथार्थ पर आधारित उपन्यास 'कंकाल' से लेकर भावात्मक ग्रामीणता पर आधारित उपन्यास 'तितली' तक उनकी औपन्यासिक प्रतिभा का विस्तार है। एंकाकी, प्रतीक रूपक, गीतिनाट्य ऐतिहासिक नाटक आदि में उन्होंने नाटकीय स्थिति का संचयन किया है। उनका निबंध साहित्य किसी भी गंभीर दार्शनिक चिन्तन को गौरव देने में समर्थ है। महादेवी वर्मा ने 'पथ के साथी' में जयशंकर प्रसाद के संबंध में लिखा है कि "बुद्धि के आधिक्य से पीड़ित हमारे युग को, प्रसाद का सबसे महत्वपूर्ण दान 'कामायनी' है। 'कामायनी' जैसे महाकाव्य के रचियता जयशंकर प्रसाद की रचनाओं में अंतर्द्वंद्व का जो रूप दिखाई देता है वह प्रसादजी के लेखनी का मौलिक गुण है। अंतर्द्वंद्व को आपके अन्य काव्यों यथा 'प्रेमपथिक, 'काननकुसुम', 'चित्राधार', 'झरना', 'आंसू', 'करूणालय', 'महाराणा का महत्व' एवं 'लहर' में भी दृष्टिगोचर होता है। आपके नाटकों यथा 'चंद्रगुप्त', ध्रुवस्वामिनी', 'राज्यश्री', 'प्रायश्चित', 'सज्जन', 'कल्याणी परिणय', विशाख', 'कामना', 'स्कंदगुप्त', 'एक घूंट', 'जनमेजय का नागयज्ञ' तथा कहानियों का संकलन यथा 'छाया', 'प्रतिध्वनी', 'इंद्रजाल', 'आंधी', 'आकाशद्वीप' में भी अंतर्द्वंद्व गहन संवेदना के स्तर पर उपस्थित है। आपके उपन्यास यथा ' कंकाल, तितली व अधूरी इरावती मे भी अंतर्द्वंद्व की स्पष्ट रेखा इंगित होती है। 'चंद्रगुप्त के आरंभिक दृश्य में अलका सिंहरण से कहती है, "देखती हूँ कि प्रायः मनुष्य दूसरों को अपने मार्ग पर चलाने के लिए रूक जाता है और अपना चलना बंद कर देता है।" सूत्र शैली में कहा गया यह वाक्य एक बड़े अंतविरोध को अपने में समाहित किए हुए है और इस द्वंद्व प्रक्रिया में अर्थ की अनेक परतें उघारता है। प्रसादजी का सर्जनात्मक गद्य यहां अपने पूरे वैभव पर है।

जयशंकर प्रसाद की अधिकांश रचनाएं कल्पना तथा इतिहास के सुदंर समन्वय पर आधारित है तथा प्रत्येक काल में यथार्थको गहरे स्तर पर संवेदना की भावभूमि पर प्रस्तुत करती है। आपकी रचनाओं में शिल्प के स्तर पर भी मौलिकता दृष्टिगोचर होती है जिसके भाषा की संस्कृतनिष्ठता तथा प्रांजलता विशिष्ठ गुण है। आपकी अनुभूति और चिंतन के दर्शन आपके चित्रात्मक वस्तु-विवरण से संपृक्त रचनाओं में भली भांति होता है। जयशंकर प्रसाद हिन्दी साहित्य की सभी महत्वपूर्ण विद्याओं में रचनाओं का सृजन किया जो उनकी प्रखर सृजनशीलता का प्रभाव है एवं हिन्दी साहित्य की अमूल्य थाती है। हिन्दी साहित्य में छायावाद के आधार स्तंभ रहे प्रसादजी साहित्याकाश में अनवरत चमकने वाले नक्षत्र माने जाते है। महादेवी वर्मा ने ठीक ही कहा है कि "छायावाद युग में भाव में जिस ज्वार ने जीवन को सब ओर से प्लावित कर दिया था उसके तट और गन्तव्य के संबंध में जिज्ञासा स्वाभाविक थी और इस जिज्ञासा का उत्तर कामायनी ने दिया। प्रसाद को आनंदवादी कहने की भी एक परम्परा बनती जा रही है पर कोई महान कवि विशुद्ध आनन्दवादी दर्शन नहीं स्वीकार करता क्योंकि अधिक और अधिक सामाणजस्य की पूकार ही उसके

सृजन की प्रेरणा है और वह निरंतर असंतोष का दूसरा नाम है। 'आनंद अंखड़ घना था' विश्व जीवन का चरम लक्ष्य हो सकता है परंतु उसे चरम सिद्ध तक पहुंचाने के लिए कवि को तो निरन्तर साधक ही बना रहना पड़ता है। सितार यदि समरसता पा ले तो फिर झंकार के जन्म का प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि वह तो हर चोट के उत्तर में उठती है और सम विषम स्वरों को एक विशेष क्रम में रखकर दूसरों के निकट संगीत बना देती है। यदि आघात या आघात का अभाव दोनों एक मौन या एक स्वर बन गए है तब फिर संगीत का सृजन और लय संभव नहीं। प्रसाद का जीवन, बौद्ध विचारधारा की ओर उनका झुकाव, चरम त्याग, बलिदान वाले करूण कोमल पात्रों की सृष्टि उनके साहित्य में बार-बार अनुगुंजित करूणा का स्वर आदि प्रमाणित करेंगे कि उनके जीवन के तार इतने सधे और खिंचे हुए थे कि हल्की सी कंपन भी उनमें अपनी प्रतिध्वनी पा लेती थी।''

जयशंकर प्रसाद की प्रांरभिक शिक्षा घर पर ही हुई, बाद में वाराणसी के क्विंस इंटर कॉलेज में अध्ययन किया परंतु इनका विपुल ज्ञान इनकी स्वाध्याय की प्रवृति से हासिल हुई तथा अपने अध्यवसायी गुण के कारण छायावाद के महत्वपूर्ण स्तंभ बने एवं हिन्दी साहित्य को अपनी रचनाओं के रूप में र्क अनमोल रत्न प्रदान किया। सत्रह वर्ष के उम्र में ही अपने माता-पिता एवं बड़े भाई के देहावसान के कारण गृहस्थी का बोझा आपके कंधे पर आ गया। गृह कलह में खानदानी समृद्धि जाती रही परंतु आभाव में एवं गरीबी क परिस्थितियां आपमें कवि व्यक्तित्व को उभारा। नौ वर्ष की उम्र में आपने कलाधर उपनाम से ब्रजभाषा में एक सवैया लिखा था। आरंभिक रचनाएं ब्रजभाषा में लिखी जिसे छोड़कर बाद में हिन्दी में आ गये। जयशंकर प्रसाद के मामा अम्बिका प्रसाद गुप्त द्वारा संपादित 'इन्दु' पत्रिका में आपकी प्रथम रचना प्रकाशित हुई थी। प्रसादजी का पहला संग्रह 'चित्राधार' है तथा 'कानन कुसुम' आपकी खड़ी बोली का प्रथम संस्करण है। 'कानन कुसुम' में प्रसादजी अनुभूति और अभिव्यक्ति की नयी दिशा तलाशने की चेष्टा की है। 'प्रेमपथिक' का ब्रजभाषा स्वरूप सर्वप्रथम 'इन्दु' पत्रिका में छपा जिसे बाद में कवि ने खूद खड़ी बोली में रूपान्तरित किया था। प्रेमपथिक एक भाव मूलक कथा है जिसके माध्यम से आदर्श प्रेम की व्यंजना की गयी है। 'करूणालय' की रचना गीति नाट्य के आधार पर हुई है। 'महाराणा का महत्व' 1914 ई. में 'इन्दु' पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। 'झरना' का प्रथम प्रकाशन 1918 ई. में हुआ था। इसमें आधुनिक काव्य की प्रवृतियां को अधिक उजागर देखा जा सकता है। कवि के व्यक्तित्व को पहली बार स्पष्ट रूप से 'झरना' में देखा जा सकता है जिसमें कवि ने छायावाद को प्रतिष्ठित किया। 'आंसू' प्रसादजी की एक विशिष्ठ रचना है जिसका प्रथम संस्करण 1925 ई. में छापा गया था। 'आंसू' को एक श्रेष्ठ गीतिकाव्य कहा जाता है जिसमें कवि की प्रेमानुभूति व्यंजित है। इसका मूल स्वर विषाद का है पर अन्ततः इसमें आशा और विश्वास के स्वर है। 'लहर' प्रसादजी की सर्वोत्तम कविताएं संकलित है। बाल्यावस्था से ही प्रसादजी का संपर्क कलाविदों, कवियों और संगीतज्ञों से रहा, जो आपके कवि प्रतिभा को विकसित होने का प्रचुर वातावरण दिया। कवि समाज में समस्या पूर्तियों से अपनी कविता का आरंभ किया। वेद उपनिषदों के गहन अध्ययन ने प्रसादजी को चिन्तनशील और दार्शनिक बना दिया तथा बौद्ध धर्म का प्रभाव के कारण आपके काव्य में करूणा की भावना का समावेश पाया जाता है। शिव भक्त होने के कारण 'कामायनी' महाकाव्य के रहस्य और आनंद सर्ग शैव दर्शन से पूर्ण रूप से प्रभावित है। प्रसादजी छायावादी काव्य के जनक और पोषक होने के साथ ही आधुनिक काव्यधारा का गौरवमय प्रतिनिधित्व करते है। प्रसादजी का सबसे बड़ा हिन्दी साहित्य को योगदान यह है कि आपने जहां रीतिकालीन को अफीमची ऋगारिकता से कविता-कामिनी को निकाला वहीं आपने द्विवेदी युग के इतिवृत्तात्मकता के नीरसता के शुष्क रेगिस्तान में उसके सूखते हुए कंठ को मधुर रस धारा प्रदान किया।

उपन्यास के क्षेत्र में प्रेमचंद के सहयोगी जयशंकर प्रसाद थे। काव्य में जीवन के चरम आदर्श आनंद को रूपायित करने वाले कवि प्रसाद अपने तीन उपन्यासों, दो पूर्ण, 'कंकाल' एवं 'तितली' और एक अपूर्ण 'इरावती' में सामाजिक यथार्थ का चित्रण ही चुनते है और इसके लिए कंकाल और तितली में आपका गद्य-विधान भी कम-बढ़ प्रेमचंद की तरह ही रहता है। अपने अंतिम अधूरे उपन्यास 'इरावती' में अवश्य आप एक भिन्न भाषिक स्तर पर रचना करते है। यहां कथानक शुंगकालीन है और रचना समस्या भी सामाजिक यथार्थ के बीच से लेखक की प्रिय जीवन साधना आनंद की भाव भूमि तक पहुंचने की है तब स्वभावत भाषा का रूप, उनके नाटकों की तरह, तत्सम शब्दावली पर आधारित काव्यात्मक लक्षणा केे निकट है। प्रसादजी की इस अंतिम अधूरी रचना में जैसे आपकी कविता, नाटक और उपन्यास तीनों रचना पक्षों का एक विराट समागम हुआ हो और 'इरावती' के अधूरेपन ने तो शायद उसकी कलात्मकता और उन्मुकता को कुछ बढ़ाया ही है। प्रसाद के आधे गाए गान के प्रिय बिंब की तरह। 'इरावती' के गद्य का कुछ अंश उदाहरणार्थ प्रस्तूत है - "इरावती ने कहा - क्या बिना मुझसे पूछे तुम रह नहीं सकते ? अग्नि ! मैं जीवन-रागिनी में वर्जित स्वर हँू। मुझे छेड़कर तुम सुखी न हो सकोगे। मुझसे मिल मुझे बचाना चाहते हो। यह तुम्हारी अनुकम्पा है। परंतु मेरे उपर मेरा भी कुछ ऋण है। मैंने भी अपने को इतने दिनों से संसा से सार लेकर, भीख मांग कर, अनुग्रह से अनुरोध से जुटा कर कैसा कुछ खड़ा कर दिया है। उस मूर्ति को क्यों बिगाडूं ? स्त्री के लिए जब देखा कि स्वाबलम्ब का उपाय कला के अतिरिक्त दूसरा नहीं, तब उसी का आश्रय लेकर जी रही हूँ । मुझे अपने में जीने दो।"

प्रेमचंद से कुछ अलग प्रसादजी के कहानी गद्य में था। प्रसादजी की ऐतिहासिक कहानियों में वैभवपूर्ण गद्य और सामाजिक कहानियों में निरीह जैसा गद्य, दोनों प्रेमचंद के सम से अलग है जिनके यहां आरोह-अवरोह का वैविध्य अपेक्षकृत कम है। प्रसादजी के तत्समाग्रही गद्य का प्रवाह देश-काल परिस्थिति के संयोग से बनता है, इतिहास और दर्शन दोनों रूपों में जिसका बड़ा सघन अध्ययन नाटकार ने कर रखा था जैसा कि उनकी नाट्य भूमिकाओं और कुछ स्वतंत्र निबंधों से भी प्रकट होता है। सभी साहित्यों के इतिहास में नाटक का माध्यम अंशत और कभी पूर्णत कविता रही है। समूचे नाटक का लेखन गद्य में स्पष्ट ही बहुत बाद का विकास क्रम है। प्रसादजी का अन्य नाटकों, 'एक घूंट' को छोड़कर, का गद्य लेखन न सिर्फ आपके समकालीनों से बल्कि आपके अपने अन्य गद्य लेखन से अलग है। प्रसादजी का नाटकों में जनमेजय परीक्षित से लेकर बौद्ध, मौर्य काल होते हुए गुप्त और हर्षबर्धन तक का संसार को देखा जा सकता है परंतु नाटकों के माध्यम से प्रसादजी सिर्फ गड़े मुर्देनही उखाड़ते अपितु अपने कथा संकेतों और चरित्रों के माध्यम से वर्त्तमान से जोड़ते है। इन नाटकों की भाषा अतीत और वर्त्तमान को जोड़ते चलती है और इस क्रम में जातीय-प्रादेशिक-सांप्रदायिक द्वन्द्वों के उपर राष्ट्रीय भाव बोध को स्थापित करती है। इस रूप में प्रसादजी का नाट्य-गद्य हिन्दी साहित्य के लिए एक विलक्षण उपलब्धि है। प्रसादजी के नाटकों की भाषा यदि ग्रहीता के मन में ऐतिहासिकता अंतराल को जन्म देती है तो कथा-भाषा आत्मीयता की अनुभूति उत्पन्न करती है। 'अजातशत्रु', 'स्कंदगुप्त', 'चुद्रगुप्त' और 'ध्रुवस्वामिनी' में प्रसादजी का बुनियादी नाट्य गद्य इसी प्रकार का है।

आलोचकों द्वारा प्रसादजी की काव्यात्मकता और तत्समाग्रही भाषा को लेकर यह प्रश्न उठाया जाता रहा है कि क्या यह गद्य श्रोता-पाठक के लिए तत्कालिक रूप से संप्रेषणीय है क्योंकि गद्य प्रकार संप्रेषण प्रक्रिया में सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व माना जाता है। आलोचकों के उक्त प्रश्न के उत्तर में यह कहा जा सकता है कि संभव है कि एक लेखक की भाषा सरल हो पर प्रवाह न हो तथा

दूसरी ओर भाषा कठिन काव्यात्मक और तत्समाग्रही हो जैसा कि प्रसादजी की है परंतु उसमें प्रवाह हो। इसे एक उदाहरण से स्पष्ट किया जा सकता है। 'अजातशत्रु' नाटक के प्रारंभ में महाराजा बिम्बीसार अपनी रानी वासवी से पूछते है, "देवी, तुम कुछ समझती हो कि मनुष्य के लिए एक पुत्र का होना क्यों इतना आवश्यक समझा गया है ?" उत्तर से संतुष्ट न होकर महाराज अपनी ओर से समाधान देते है, "संसारी को त्याग, तितिक्षा या विराग होने के लिए पहला और सहज साधन है। पुत्र को समस्त अधिकार देकर वीतराग हो जाने से असंतोष नहीं होता क्योंकि मनुष्य अपनी ही आत्मा का भोग उसे भी समझता है।"

ऐतिहासिक नाटक के माध्यम से उत्तराधिकारी की समस्या का ऐसा संक्षिप्त और मर्मस्पर्शी विवेचना प्रसादजी को छोड़कर शायद ही कहीं और मिले, जो एक ही साथ जितना दार्शनिक विवेचना है उतना ही व्यावहारिक भी। प्राय सत्ता से लेकर गृहस्थ तक में उत्तराधिकारी की समस्या कैसे परिव्याप्त है,इसका संप्रेषण हर दर्शक वर्ग को अपने-अपने स्तर पर हो जाता है। प्रसादजी का सिर्फ एक नाटक 'एक घूंट' ही रोजमर्रा के बोलचाल की भाषा में है तथा इसी भाषा में प्रसादजी के बाद के नाटक प्राय लिखे गये है। जयशंकर प्रसाद की काव्यभाषा दो स्तरों, एक बिंब भाषा और दूसरा वर्णन की भाषा में गतिशील होती है। बिंब भाषा जहां पूर्णत व्यवस्थित है वहीं वर्णन की भाषा में कुछ ढ़िलाई देखने को मिलती है। प्रसाद के एतिहासिक नाटकों का काल मानव संस्कृति के आरंभ से, जनमेजय का नागयज्ञ सम्राट हर्षबर्धन तक, राजश्री माना जाता है। इस विस्तृत काल अवधि की भाषा में संस्कृत तत्सम शब्दावली का प्रचुर प्रयोग दो प्रयोजनों, यथा, प्रथम तो तत्कालीन संस्कृति की झलक और द्वितीय नाटक काल समकालीन जीवन व्यवस्था से बहुत पूराना है, को सिद्ध करता है। प्रसादजी के ऐतिहासिक नाटकों का गद्य विधान संवाद प्रवाह की बुनियादी समस्या उत्पन्न नहीं करता है। उदाहरण के लिए नाटक 'चंद्रगुप्त' में चाणक्य का लंबा स्वगत कथन, "समझदारी आने पर यौवन चला जाता है। जबतक माला गूंथी जाती है तबतक फूल कुम्हला जाते है।" इन संवादों में कुछेक शब्दों का ठीकठाक अर्थ भले ही न समझ में आए परंतु काव्यात्मक प्रसंग पूरे के पूरे ग्राहय है। ऐसा ही एक उदाहरण जब सिंहरण कहता है, "अतीत सूखों के लिए सोच क्यों, अनागत भविष्य के लिए भय क्यों और वर्त्तमान को मैं अपने अनुकूल बना ही लूंगा, फिर चिंता किस बात की ?" 'स्कंदगुप्त नाटक में देवसेना के भूख से नारी जीवन को रेखांकित करते ये संवाद कि "संगीत सभा की अंतिम लहरदार और आश्रयहीन तान, धूपदान की एक क्षीण गंध-रेखा, कुचले हुए फूलों का ग्लान सौरभ और उत्सव के पीछे का अवसाद, इन सबों की प्रतिक्रिया मेरा क्षुद्र नारी जीवन।"

जयशंकर प्रसाद का महत्वपूर्ण चिंतन छायावाद और रहस्यवाद की पृष्ठभूमि को लेकर अधिक है। रहस्वाद को उन्होंने वैदिक परम्परा के स्वास्थ-सहज विकास के रूप में देखा जो अपने अद्वैत चिंतन में इस संसार को स्वीकार करता है तथा विवेक के स्थान पर आनंद को महत्व प्रदान करता है। आपका अधूरा उपन्यास 'इरावती', कहानी 'सालवती' और 'रहस्वाद' विषयक निबंध का गद्य रचनात्मक और आलोचनात्मक लेखन का सुंदर उदाहरण है। अपने अधूरे उपन्यास 'इरावती' में प्रसादजी अग्निमित्र के समय यानी 155 ई.पू. के आसपास परवर्ती बौद्ध समाज में व्याप्त विधि निषेधों के माध्यम से आधुनिक हिन्दू समाज की विषमताओं का अतिसुदंर चित्रण किया है। अपनी पुस्तक 'प्रसाद का गद्य' के समापन में सूर्यप्रसाद दीक्षित ने ठीक ही लिखा है कि "गद्य की अनेक विधाएं प्राय प्रसाद द्वारा उत्कृष्ट रूप में अविष्कृत हुई है।"

प्रसादजी के उपन्यास के गद्य में तद्भवता और तत्समता अपने-अपने ढ़ग से कैसे नियुक्त है इसे दो उदाहरणों से समझा जा सकता है, पहला 'तितली' उपन्यास के आरंभ का एक वर्णन इस प्रकार है "संध्या गांव की सीमा में धीरे-धीरे आने लगी। अंधकार के साथ

ही ठंड़ बढ़ चली। गंगा की कछार की झाड़ियों में सन्नाटा भरने लगा। नालों के करारों में चरवाहों के गीत गूंज रहे थे।" यह वर्णन आधुनिक गांव की संध्या का है जो जितना सामान्य है उतना ही आश्वस्तिकर भी है। दूसरा उदाहरण 'इरावती' उपन्यास के आरंभिक वर्णन से लिया जा सकता है जो इस प्रकार है, "महाकाल के विशाल मंदिर में सांयकालीन पूजन हो चुका। दर्शक अभी भी भक्ति भाव से यथास्थान बैठ रहे थे। मंडप के विशाल स्तंभों से वेले के गजरे झूल रहे थे। स्वर्ण के उंचे दीपाघरों में सुंगधित तैलों के दीप जल रहे थे। कस्तूरी अगुरू से मिली हुई धूप-गंध मंदिर में फैल रही थी।" यह वर्णन प्राचीन विशाल मंदिर का है जहां की भव्यता आशंका को उकसाती है। प्रसादजी का अन्य दो उपन्यास 'कंकाल' और 'तितली' समकालिन समाज का चित्रण करते है। आपकी पांच कहानी संग्रहों में कुल सत्तर कहानियां है जिसमें कुछेक कहानियां ऐतिहासिक और ज्यादातर कहानियां समकालिन समाज, धर्म और आर्थिक स्थितियों का चित्रण है।

निष्कर्ष

महाकवि जयशंकर प्रसाद आधुनिक हिन्दी साहित्य के सर्वांगिण विकास में सबसे अधिक योगदान देने वाले साहित्यकार थे। काव्य, कथा साहित्य, नाटक, आलोचना, दर्शन, इतिहास सभी क्षेत्रों में उनकी प्रतिभा अद्वितीय है। साहित्य जगत हमेशा ऐसे महान कवि, लेखक, कहानीकार, नाटककार, गीतकार का ऋणि रहेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. इन्द्रनाथ मदान : जयशंकर प्रसाद चिंतन व कला – हिन्दी भवन, इलाहाबाद, पहला संस्करण, 1956।
2. उपेन्द्रनारायण सिंह, आधुनिक हिन्दी नाटकों पर आंगल नाटकों का प्रभाव, हिन्दी साहित्य संसार, पटना, प्रथम संस्करण, 1970।
3. डॉ0 उमाशंकर सिंह : हिन्दी के समस्या नाटक – उर्जा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 1978।
4. उमेश शास्त्री : प्रसाद साहित्य में आर्दावाद एवं नैतिक दर्शन, देवनगर प्रकाशन, जयपुर।
5. उदयनारायण राय : गुप्त सम्राट और उनका काल, लोक भारती प्रकाश, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 1971।
6. करूणापति त्रिपाठी : प्रसाद का साहित्य प्रसाद परिषद, वाराणसी, 1975।